Journal of Research and Development
Peer Reviewed International, Open Access Journal.
ISSN : 2230-9578 | Website: https://jrdrvb.org Volume-17, Issue-7 | July - 2025

Original Article

# भारतीय संस्कृति के आद्य प्रणेता भगवान ऋषभदेव की जन्मभूमि "अयोध्या"; संस्कृतियों की साक्षी

**डॉ. नेहा जैन**
असि. प्रो. समाजशास्त्र, पं. दी. द. उपा. रा. म., स्ना.महा., लखनऊ
**Email:** rakeshranasocio@gmail.com

**Manuscript ID:**
JRD -2025-170747
ISSN: 2230-9578
Volume 17
Issue 7|
Pp. 245-252
July 2025
**Submitted:** 19 June. 2025
**Revised:** 29 June. 2025
**Accepted:** 14 July. 2025
**Published:** 31 July. 2025

***सारांश***

*दुनिया के सभी राष्ट्रों में भारत ही ऐसा राष्ट्र है जिसका इतना समृद्ध, गौरवपूर्ण अतीत रहा है। जैन, बौद्ध एवं वैदिक तीनों परम्पराओं के अगणित पुरातात्विक अवशेष, दुर्लभ पाण्डुलिपियां एवं सहस्त्रों तीर्थस्थल यहाँ यत्र-यत्र उपलब्ध है। विश्व की प्राचीनतम संस्कृतियों में से एक; जैन संस्कृति जो वस्तुतः प्राचीनतम संस्कृति है; के अन्तर्गत प्रथम तीर्थकर 'भगवान ऋषभदेव' (आदिनाथ) का जन्म उ. प्र. के अयोध्या नगरी में हुआ था। भगवान 'अजितनाथ', भगवान अभिनन्दन नाथ, भगवान सुमतिनाथ एवं भगवान अनंतनाथ का भी जन्म इस पवित्र नगरी 'अयोध्या' में हुआ है। मर्यादा पुरुषोत्तम 'श्री राम', जिन्हें जैन परम्परा में भी 63 श्लाका पुरुषों के अन्तर्गत अत्यन्त पूज्य माना गया है, का जन्म भी इसी भूमि में इक्ष्वाकु वंशी महाराजा 'दशरथ' के घर हुआ था। श्री रामचन्द्र जी के पूर्वज इक्ष्वाकु वंशी महाराजा नाभिराय आदि उनसे अगणित वर्ष पूर्व में ही अयोध्या पर शासन करते रहे है। भरत क्षेत्र के आर्यखण्ड में इन्द्रो द्वारा निर्मित 'अयोध्या' नगरी भी तीर्थकरों की जन्मभूमि होने से 'महातीर्थ' मानी गयी है। यह अनादि इसलिये मानी गयी है कि हमेशा अवसर्पिणी-उत्सर्पिणी के चतुर्थकाल के प्रारम्भ में इन्द्रों द्वारा बसायी गयी होने पर भी यहां पर हमेशा चौबीस-चौबीस तीर्थकर होते हैं अतः यह इस दृष्टि से शाश्वत, अनादि है।*

***मुख्य शब्दः-*** *अवसर्पिणी, उत्सर्पिणी, कुलकर, युगलिया, असि, मसि, हुण्डासर्पिणी।*

## भूमिका

जैन धर्म की प्राचीनता और अनादि तीर्थ "अयोध्या" का जैनागम में वर्णित ऐतिहासिक, सांस्कृतिक परिप्रेक्ष्य को विश्वपटल पर 'ऋषभदेव' प्रथम तीर्थकर की जन्मभूमि के रूप में जैन परम्परा से अवगत होना इस शोध पत्र का उद्देश्य है। **भगवान ऋषभदेव और सम्राट भरत इतने अधिक प्रभावशाली पुण्यपुरुष हुये कि उनका जैन ग्रन्थों में तो उल्लेख आता ही है इसके अतिरिक्त वैदिक परम्परा में भी जैसे वेद के मन्त्रों, जैनेतर पुराणों, उपनिषदों आदि में उल्लेख मिलता है।** महर्षि वेदव्यास प्रणीत श्रीमद् भागवत महापुराण [प्रथम खण्ड] के पंचमस्कन्ध तृतीयोSध्यायः राजा नाभि का चरित्र वर्णित है।

**"नाभिपपत्यकामोSप्रजया" मेरूदेव्या भगवंत यज्ञपुरुषमवहितात्मायजत ।।1।।**

इसी तरह ऋषभदेव जी के राज्यशासन का वर्णन भी चतुर्थ अध्याय में मिलता है।

**अथ ह तमुत्पत्यैवाभि व्यज्यमान भगवह्लक्षणं साम्योपशमवैराग्यैश्वर्य महाविभति भिरनुदिन मेधमानानुभांव प्रकृतया प्रजा ब्राह्मणा देवताSश्वनितलसम वनायातितरां जगृधुः ।।1।।**

**तस्य ह वा इत्थं वर्ष्मणा वरीयसा वृहच्छलोकेन चौजसा बलेन श्रिया वीर्य शौर्याभ्यां च पिता ऋषभ इतींद नाम चकार ।।2।।**

Quick Response Code:

***Creative Commons (CC BY-NC-SA 4.0)***
*This is an open access journal, and articles are distributed under the terms of the Creative Commons Attribution-NonCommercial-ShareAlike 4.0 International Public License, which allows others to remix, tweak, and build upon the work noncommercially, as long as appropriate credit is given and the new creations ae licensed under the idential terms.*

**Address for correspondence:**
*डा. नेहा जैन, असि.प्रो. समाजशास्त्र, पं.दी.द.उपा.रा.म., स्ना.महा., लखनऊ*

**How to cite this article:**
*जैन, . नेहा. (2025). भारतीय संस्कृति के आद्य प्रणेता भगवान ऋषभदेव की जन्मभूमि "अयोध्या"; संस्कृतियों की साक्षी. Journal of Research & Development, 17(7), 245–252.* *https://doi.org/10.5281/zenodo.16931180*

Website:
https://jrdrvb.org/
DOI:10.5281/zenodo.16931180
OPEN ACCESS

Journal of Research and Development
Peer Reviewed International, Open Access Journal.
ISSN : 2230-9578 | Website: https://jrdrvb.org Volume-17, Issue-7 | July - 2025

श्री शुकदेव जी कहते है- राजन् नाभिनंदन के अंग जन्म से ही भगवान विष्णु के वज्र आदि चिन्हों से युक्त थे; समता, शान्ति, वैराग्य और ऐश्वर्य आदि महाविभूतियों के कारण उनका प्रभाव दिनोंदिन बढ़ता जाता था। यह देखकर मन्त्री आदि प्रकृतिवर्ग, प्रजा देवताओं, ब्राह्मणों की यह अभिलाषा होने लगी कि ये ही पृथ्वी का शासन करें। उनके सुन्दर और सुडोल शरीर, विपुल कीर्ति, तेज, बल, ऐश्वर्य, यश, पराक्रम, शूरवीरता आदि गुणों के कारण महाराज नाभि ने उनका नाम 'ऋषभ' (श्रेष्ठ) रखा।

**अग्निध्रसूनोर्नाभेस्तु ऋषभोऽभूत सूतो द्विजः। ऋषभाद भरतो जते वीरः पुत्र शताद् वरः ।।39।।**

**सोऽभिषिच्यर्षभः पुत्रं महाप्राव्राज्यमास्थितः। तपस्तेपे महाभागः पुलहाश्रमसंशयः ।।40।।**

**हिमाहं दक्षिणं वर्ष भरताय पिता ददौ। तस्मातु भारतं वर्ष तस्य नाम्ना महात्मनः ।।41।।**

**मार्कण्डेयपुराण, अध्याय 40**

कितने ही ग्रन्थों, पुराणओं में जैसे मार्कण्डेयपुराण श्रीमदभगवत पुराण, वाराहपुराण, विष्णुपुराण आदि में वर्णित है कि 'ऋषभदेव' के प्रथम पुत्र 'भरतचक्रवर्ती के नाम से ही 'भारत' नाम विख्यात हुआ।

**"नाभिर्मरुदेव्यां पुत्रमजयनत ऋषभनामानं तस्य भरतः पुत्रश्य तावद्ग्रजः तस्य भरतस्य पिता ऋषभः हेमाद्रेर्दक्षिणं वर्ष महद् भारतं नाम शशास"**

**वाराहपुराण, अध्याय 14**

श्रीमदभागवत् में वर्णित है **कि भगवान ऋषभदेव ने अपने देश 'अजनाभखण्ड' को कर्मभूमि मानकर लोकसंग्रह हेतु कुछ काल गुरुकुल में वास किया उन्ही के महायोगी भरत जी सबसे बड़े और सर्वाधिक गुणवान पुत्र थे जिनके नाम से लोग इस अजनाभखण्ड को 'भारतवर्ष' कहने लगे।**

**येषां खलुमहायोगी भरतो ज्येष्ठः श्रेष्ठगुण आसीचेनेदं वर्ष भारतमिति व्यपदिशन्ति ।।9।।**

**श्रीमदभागवतपुराण**

**भगवान ऋषभदेव और ब्रह्मा-** लोक में ब्रह्मा नाम से जो प्रसिद्ध देव है वह जैनपरम्परानुसार, भगवान ऋषभदेव को छोड़कर दूसरा नहीं है। ब्रह्मा के अन्य नामों में निम्नलिखित नाम अत्यन्त प्रसिद्ध है; **हिरण्यगर्भ, प्रजापति, लोकेश, नाभिज, चतुरानन, स्वंयभू** इनकी यथार्थ संगति भी भगवान ऋषभदेव के साथ मिलती है।

**हिरण्यगर्भ-** जब भगवान माता 'मरूदेवी' के गर्भ में आये थे, उसके छह माह पूर्व से अयोध्या नगर में हिरण्य-सुवर्ण तथा रत्नों की वर्षा होने लगी थी। इसिलिये आपका नाम हिरण्यगर्भ सार्थक है।

**प्रजापति-** कल्पवृक्षों के नष्ट हो जाने के बाद असि, मसि, कृषि आदि छह विघाओं का उपदेश देकर आपने प्रजा की रक्षा की थी, इसलिये आप प्रजापति कहलाये।

**लोकेश-** समस्त लोक के स्वामि थे, इसलिये लोकेश कहलाते थे।

**नाभिज-** नाभिराज नामक चौदहवें मनु (कुलकर) से उत्पन्न हुये थे इसलिये नाभिज कहलाते थे।

**चतुरानन-** समवसरण में चारों ओर से आपका दर्शन होता था, इसलये आप चतुरानन कहे जाते थे।

**स्रष्टा-** भोगभूमि नष्ट होने के बाद देश, नगर आदि का विभाग, राजा, प्रजा, गुरु, शिष्य आदि का व्यवहार विवाहप्रथा आदि के आप आद्य प्रवर्तक थे, इसलिये स्रष्टा कहे जाते थे।

**स्वंयभू-** दर्शनविशुद्धि आदि भावनाओं से आपने आत्मा के गुणों का विकास कर स्वंय ही आद्य तीर्थकर हुये थे, इसलिये स्वंयभू कहलाते थे।

भगवान जिनेन्द्र देव की वाणी बारह अंगों में विभाजित है। इसे ही पूर्वाचार्यो ने चार अनुयोगों में अनुबद्ध किया है और इन अनुयोगों को वेद की संज्ञा दी गयी है। **जो न्यूनता-अधिकता से रहित है, विपरीत भी नहीं है ऐसे वचनों को जैनाचार्यों ने 'वेद' कहा है। इस वेद के 'प्रथमानुयोग', 'करूणानुयोग', 'चरणानुयोग' और द्रव्यमुयोग ऐसे चार भेद माने जाते है।** वर्तमान में उपलब्ध जैनवांगमय इन चार महापुराणों, अनुयोगों में ही विभक्त है इनके अतिरिक्त पुराणों एवं ग्रन्थों में **'अयोध्या' को जैनधर्म के प्रथम तीर्थकर भगवान ऋषभदेव की जन्मभूमि के रूप में शाश्वत, अनादितीर्थ कहा गया है।** स्रष्टि का क्रम, और उसमें उत्सर्पिणी, अवसर्पिणी, के षट्काल परिवर्तन एवं षट्काल परिवर्तन में भोगभूमि की व्यवस्था का वर्णन मिलता है। चौदह कुलकरों की उत्पत्ति, उनके कार्यकलापों का वर्णन; अंतिम कुलकर महाराज नाभिराज का 'मरूदेवी' से विवाह एवं प्रथम तीर्थकर ऋषभदेव का पुत्र के रूप में जन्म, विवाह आदि का वर्णन मिलता है।

**विषय प्रस्तुतिकरण- "स्रष्टि का क्रम"**

यह तीन लोक रूप सम्पूर्ण विश्व शाश्वत है। जिसमें उर्ध्वलोक, मध्यलोक, और अधोलोक हैं। इनका आकार पुरुषाकार द्वीप है मध्यलोक के अन्तर्गत असंख्यात द्वीप समूह है। इन असंख्यात द्वीप समुद्रों में सर्वप्रथम द्वीप का नाम **जम्बूद्वीप** है। जो कि गोलाकार थाली के आकार वाला है और एक लाख योजन विस्तृत है। **इसमें भरत, हैमवत, हरि, विदेह, रम्यक, हैरण्वत, और ऐरावत यह सात क्षेत्र हैं** इस द्वीप में भरत क्षेत्र के नाम का क्षेत्र है जो इस जम्बूद्वीप में एक लाख योजन के एक सौ नंबेवां भाग है। इस भरत क्षेत्र में छह खण्ड है, इनमें से मध्यखण्ड का नाम **'आर्यखण्ड'** है। इस आर्यखण्ड में हमेशा ही षट्काल परिवर्तन होता रहता है। **इसे युग परिवर्तन भी कहते है।** इस

काल परिवर्तन को समझने से स्रष्टि का क्रम भी समझ आ जाता है। **भरतक्षेत्र के आर्यखण्ड में अवसर्पिणी-उत्सर्पिणी काल के दो विभाग होते है जिनमें मनुष्यों एवं त्रियंचो की आयु, शरीर की उंचाई, वैभव आदि घटते रहते है वह 'अवसर्पिणी' एवं जिसमें बढ़ते रहते है वह 'उत्सर्पिणी' कहलाता है।** अद्धापल्यों से निर्मित दस कोड़ा कोड़ी सागर प्रमाण अवसर्पिणी और इतना ही उत्सर्पिणी काल भी है, इन दोनों को मिलाकर बीस कोड़ा कोड़ी सागर का एक कल्पकाल होता है। **अवसर्पिणी और उत्सर्पिणी में से प्रत्येक छह-छह भेद है।** सुषमासुषमा, सुषमा, सुषमा-दुःषमा, दुषमा-सुषमा, दुःषमा और अतिदुःषमा **उत्सर्पिणी काल के भी छह भेद होते है जो इनसे विपरीत होते है।** 'सु' और 'दुर' उपसर्ग क्रम से अच्छे-बुरे अर्थ होने से व्याकरण से निष्पन्न ये 'सुषमा' 'दुःषमा' शब्द अच्छे और बुरे काल वाचक हो जाते है। ये दोनो ही भेदकालचक्र के परिभ्रमण से सतत् कृष्णपक्ष और शुक्लपक्ष की तरह घूमते रहते है। **अवसर्पिणी के छह कालों में प्रथम, द्वितीय एंव तृतीय काल में उत्तम, मध्यम एवं जघन्य भोगभूमि की व्यवस्था रहती है।** इस काल में युगल रूप से उत्पन्न हुये मनुष्य उत्तम तिल, मशा, चक्र, शंख आदि चिन्हों सहित जिनके शरीर की उंचाई छः हजार धनुष अर्थात तीन कोस तथा आयुं तीनपल्य प्रमाण होती है। यहा के प्रत्येक स्त्रीपुरुषों के पृष्ठभाग में 256 हड्डियां होती है। इनके शरीर मलमूत्र, पसीने से रहित, सुगंध विश्वास सहित, तपे हुये सुवर्ण सदृश वाले होते प्रत्येक मनुष्य का बल नौ हजार हाथियों सदृश रहता। **इस काल में नर-नारी से अतिरिक्त अन्य परिवार नहीं होते है। इस समय वहां ग्राम- नगर आदि नहीं होते है, दस प्रकार के कल्पवृक्ष होते है जो युगलों को अपने-अपने मन की कल्पित वस्तुओं को दिया करते है।** पनांग, तूर्यांग, भूषणांग, वस्त्रांग, भोजनांग, आलयांग, दीपांग, भागनांग, मालांग, और ज्योतिरंग ये दस प्रकार के कल्पवृक्ष है। द्वितीय तृतीय काल में यह धीरे-धीरे घटते हुये परिवर्तित होते है। मनुष्यों की उँचाई, बल, आयु, तेज उतरोत्तर हीन होते जाते है। **इन तीनों ही भोगभूमियों में चोर, शत्रु आदि की बाधायें, असि, मसि, कृषि आदि छह कर्म शीत, आतप, प्रचंड वायु एंव वर्षा आदि नही होती है इसलिये इन्हें क्रम से उत्तम, मध्यम एवं जघन्य भोगभूमि भी कहते है।**

**कुलकरों की उत्पत्तिः-** इस भरत क्षेत्र के मध्यवर्ती आर्यखण्ड में अवसर्पिणी के तृतीय काल में जब पल्य का आठवाँ भाग शेष रह गया था तब कुलकरों की उत्पत्ति प्रारम्भ हुयी थी। **प्रथम कुलकर का नाम 'प्रतिश्रुति'** और उनकी देवी का नाम 'स्वंयप्रभा' था। प्रतिश्रुति कुलकर के समय सांयकाल में भोग भूमियों की पूर्व दिशा में उदित होता चन्द्र और पश्चिम दिशा में अस्त होता हुआ सूर्य दिखलाई पड़ा। उन्होने प्रजा के भय को दूर करते हुये उन्हे सूर्य एवं चन्द्र ग्रह से परिचय कराया और बताया कि कालवश ज्योतिरंग जाति के कल्पवृक्षों की किरण समूह मंद पड़ जाने से यह अब दिखाई दे रहे है, ये हमेशा ही आकाश में परिभ्रमण करते रहते है।

इस प्रकार **'सन्मति' कुलकर** जिनके समय ज्योतिरंग कल्पवृक्ष पूर्णतः नष्टप्रायः हो गये और सूर्यास्त के बाद अंधकार और आकाश में तारों का समूह दिखने लगा। फिर क्रमशः **क्षेमंकर, क्षेमंधर, सीमंकर, सीमंधर, विमलवाहन, चक्षुष्मान, यशष्मान, अभिचन्द्र, चन्द्राभ, मरूदेव** [पहले यहां युगल संतान उत्पन्न होती थी, परन्तु इसके आगे संतान की उत्पत्ति को दूर करने की इच्छा से ही मानो मरूदेव ने 'प्रसेनजित' नाम के पुत्र को उत्पन्न किया। विधिविधान से अपने पुत्र का विवाह सम्पन्न कराया। यहां से युगलिया जन्म लेने की प्रथा समाप्त हो गयी थी।

**एकमेवा सृजत पुत्रं, प्रसेनजितमत्र सः।**
**युग्म सृष्टेरिहैवोर्ध्वमितो व्यपनिनीषया ।।166।।**
**प्रसेनजित भायोज्य प्रस्वेदल वभूषितम्।**
**विवाह विधिना वीरः प्रधानकुलकन्यया ।167।।**
**(हरिवंशपुराण, सर्ग 7)**

हरिवंश पुराण में लिखा है कि 13 वें कुलकर प्रसेनजित ने एक करोड़ पूर्व की आयु वाले, जन्मकाल बालको के नालकाटने की व्यवस्था करने वाले 'नाभिराज' नाम चौदहवें कुलकर को उत्पन्न किया था।

**पूर्वकोट्यायुषं नाभि प्रसेवाजिदजीजनत।**
**नाभिच्छेद्यवस्थायाः कर्तारं स्वर्गगामिनम् ।।168।।**

इन्द्र ने स्वंय आकर राजा नाभिराज का विवाह कन्या 'मरूदेवी' के साथ कराया था। जिसका उल्लेख महापुराण में मिलता है।

**तस्यासीन् मरूदेवीति, देवी देवीव सा शची**
**तस्याः किल समुद्धाहे सुरजाजेन चोदिता**
**सुरोत्तमा महाभूत्या, चक्रुः कल्यावकौंतुकम ।।5।।**
**महापुराण पर्व 12**

महाराजा नाभिराज के समय कल्पवृक्षों के नष्ट हो जाने, मेघों के गरजने, बरसने से ही पृथ्वी पर स्वभाव से ही उत्पन्न हुयी वनस्पतियां, धान्य आदि दिखाई देने लगे बिना बोये ही उत्पन्न हुये धान्य सभी ओर हुये परन्तु प्रजा इनके उपयोग से अन्जान थी। क्षुधा वेदना से पीड़ित प्रजा इनके उपयोग से अन्जान थी। क्षुधा वेदना से पीड़ित प्रजा को नाभिराज ने खाने योग्य वृक्ष, फल आदि बताकर आजीविका के अनेको उपाय बताकर उन्हे सुखी किया। **यही चौदह कुलकर प्रजा के जीवन को जानने से 'मनु' तथा आर्यपुरुषों को कुल की तरह एक साथ रहने का उपदेश देकर 'कुलकर' अनेक वंशों को स्थापित करने से 'कुलंधर' और युग के आदि में होने से 'युगादि पुरुष' भी कहे गये।**

Journal of Research and Development
Peer Reviewed International, Open Access Journal.
ISSN : 2230-9578 | Website: https://jrdrvb.org Volume-17, Issue-7 | July - 2025

**"अयोध्या नगरी की रचना"-** मरूदेवी और नाभिराज से अलंकृत पवित्र स्थान में जब कल्पवृक्षों का अभाव हो गया तब वहां इन्द्र ने 'अयोध्या' नगरी की रचना की इन्द्र द्वरा बसायी गयी अयोध्या नगरी में यत्र-तत्र बिखरे हुये मनुष्यों को देवों ने लाकर उस नगरी में बसाया और सबकी सुविधानुसार अनेक प्रकार के उपयोगी स्थानों की रचना की। **हरिवंशपुराण में भी इसका वर्णन मिलता है "उस समय दक्षिण भरत क्षेत्र में कल्पवृक्षरूप प्रासाद था, वही पृथ्वीनिर्मित प्रासाद बन गया था। राजा नाभिराज के उस प्रासाद का नाम 'सर्वेतोभद्र' था उसके खम्बे स्वर्णमय थे। दीवालें नानाप्रकार की मणियों से निर्मित थी वह पुखराज, मूँगा मती आदि मालाओं से सुशोभित था। इक्यासी खण्ड से युक्त था और कोट, वापिका और बाग-बगीचों से अलंकृत था।***

अयोध्या नगरी सुकौशल देश में थी इसलिये देश के नाम से 'सुकौशल' इस प्रसिद्धि को भी प्राप्त हुयी थी। वह नगरी अत्यन्त सभ्य, शिक्षित, विनीत मनुष्यों से व्याप्त थी इसीलिये वह 'विनीता' भी मानी गयी थी। **वह अयोध्या नाम की राजधानी** अत्यन्त प्रसिद्ध थी और आगामी देश की नाभि-मध्यभाग की शोभा धारण करती हुयी सुशोभित होती थी। वह नगरी ऐसे जान पड़ती थी मानो आगे कर्मभूमि के समय में होने वाले नगरों की रचना प्रारंभ के लिये एक प्रतिबिंब- नक्शा ही बनाया गया हो। **अनन्तर उस अयोध्या नगरी में सब देवों ने मिलकर किसी शुभ दिन, शुभ मुर्हुत, शुभयोग, शुभलग्न में हर्षित होकर पुण्याहवाचन किया। जिन्हें सम्पदाओं की परम्परा प्राप्त हुयी थी ऐसे महाराज नाभिराज ने मरुदेवी के साथ होकर पुण्याहवाचन के समय से ही उस अतिशय ऋद्धियुक्त अयोध्या नगरी में निवास करना प्रारम्भ किया था।**

यह अयोध्या बारह योजन लम्बी और जैनग्रन्थों में इसे 'अनादिनिधन' माना गया है। यहां प्रत्येक चतुर्थकाल में चौबीस-चौबीस तीर्थकर हुये है और आगे भी होते रहेंगे। इस बार अयोध्या में पांच तीर्थकर ही हुये है शेष उन्नीस तीर्थकर अन्यत्र हस्तिनापुर, श्रावस्ती आदि नगरों में जन्म लिये। यह हुण्डासर्पिणी का दोष माना गया है फिर भी 'अयोध्या' का महत्व अवर्णनीय है।

**महर्षि वाल्मीकिकृत रामायण के पंचमः सर्गः** में उल्लिखित है

**"कोशलो नाम मुदितः स्फीतो जनपदों महान्**
**निविष्टा सरयू तीरे प्रभूत धनधान्यवान"।।**

कोशल नाम से प्रसिद्ध एक बहुत बड़ा जनपद है, जो सरयू नदी के किनारे बसा हुआ है। वह प्रचुर धनधान्य से सम्पन्न, सुखी और समृदशाली है। वाल्मीकि रामायण में कहा है **"सरयूनदी के दोनो तटों पर बसा हुआ कौशल देश है उसकी 'अयोध्या' नाम की महानगरी है, इसका मनु ने स्वंय निर्माण किया था। यह बारह योजन लंबी है.........."**

[यहां 1 योजन 4 कोश का माना गया है]

महाराज 'नाभिराज' और 'मरुदेवी के पुत्र रूप में भगवान 'ऋषभदेव' जन्म लेंगे, ऐसा जानकर इन्द्र ने भगवान के गर्भ में आने से छह माह पूर्व ही माता के आंगन में रत्नों की वर्षा शुरु कर दी थी। श्री ऋषभदेव के गर्भ, जन्म दो कल्याणक, शेष चार तीर्थकर के गर्भ, जन्म, तप और केवलज्ञान ऐसे चार-चार कल्याणक यहीं पर हुये है। यहां **जन्में पांचों तीर्थकरों के जन्मस्थानं सूचक 'श्रीचरण' यथा स्थान यही पर टोंको पर निर्मित है। शेष 19 तीर्थकरो के 'श्रीचरण' यहां पर विराजमान है एवं उनके संक्षिप्त जीवनपरिचय भी उत्कीर्ण किये गये है।**

इस प्रकार भरतक्षेत्र के आर्यखण्ड में इन्द्रों द्वारा निर्मित अयोध्या नगरी तीर्थकरों की जन्मभूमि होने से 'महातीर्थ' मानी गयी है।

**प्रथम तीर्थकर तृतीय काल में**

जब तृतीयकाल में चौरासी लाख वर्ष पूर्व, तीनवर्ष साढ़े आठ मास प्रमाण काल शेष रह गया था तब अंतिम कुलकर महाराजा नाभिराय की महारानी 'मरूदेवी' ने प्रथम तीर्थकर भगवान 'ऋषभदेव' को जन्म दिया। जब ऋषभदेव युवावस्था को प्राप्त हुये तब पिता ने इन्द्र की अनुमति से ऋषभदेव का विवाह यशस्वती एंव सुनंदा नाम की कन्याओं के साथ कर दिया। भगवान ऋषभदेव के भरत, बाहुबली आदि एक सौ एक पुत्र और ब्राह्मी सुन्दरी नाम से दो कन्यायें हुयी। भगवान ऋषभदेव ने त्रियों से कहा हे पुत्रियों! तुम दोनों विद्या ग्रहण करने में प्रयत्न करो क्योंकि विद्या ग्रहण करने का यही काल है। ऐसा कहकर बराबर उन्हें आशीर्वाद देकर भगवान ने अपने चित्त में स्थित श्रुतदेवता को आदरपूर्वक सुवर्ण के विस्तृत पट्टेट पर स्थापित किया, फिर भगवान ने "सिद्धम नमः" मंगलाचरण पूर्वक अपने दाहिने हाथ से 'अ' 'आ' आदि वर्णमाला लिखकर ब्राह्मी को शुद्ध अक्षरावली लिखने का उद्देश्य दिया। जिसका नाम सिद्धमातृका है, जो स्वर व्यंजन के भेद से दो भेदरूप है और समस्त विद्याओं में पाये जाते हैं। भारत की सर्वाधिक प्राचीन लिपी ब्राह्मी इन्ही के नाम से प्रसिद्ध हुई। भगवान ने अपने बायें हाथ से इकाई दहाई आदि संख्या को सुन्दरी को अंक गणित लिखने का उद्देश्य दिया। व्याकरणशास्त्र, छंदशास्त्र, अलंकारशास्त्र इन तीनों के समूह को वांगमय कहते हैं।

**भरत आदि पुत्रों का विद्याध्ययन**

भगवान ऋषभदेव ने इसी प्रकार अपने भरत आदि पुत्रों को भी विनयी बनाकर अनेक शास्त्र पढ़ाये लोक का उपकार करने वाले जो शास्त्र थे भगवान ने उन सभी को अपने पुत्रों को पढ़ाया, जैसे अर्थशास्त्र, नृत्यशास्त्र, वास्तुशास्त्र, शिल्पशास्त्र, आयुर्वेद, तंत्रपरीक्षा, रत्नपरीक्षा आदि।

Journal of Research and Development
Peer Reviewed International, Open Access Journal.
ISSN : 2230-9578 | Website: https://jrdrvb.org Volume-17, Issue-7 | July - 2025

**भगवान द्वारा प्रजा षट्कर्म का उद्देश्य**

**असिर्मषिः कृषिर्विद्या वाणिज्यं शिल्पमेव च। कर्माणीमानि षोढा स्युः प्रजाजीवन हेतवः ।।179।।**

**(आदिपुराण पर्व 16, पृष्ठ 362)**

असि (सैनिक) मसि (लेखनी) कृषि, विद्या, वाणिज्य और शिल्प यह छह कार्य प्रजा की आजीविका के कारण हैं। भगवान ऋषभदेव ने अपनी बुद्धि कुशलता से प्रजा के लिए इन्ही छह कर्मों द्वारा आजीविका करने का उद्देश्य दिया था क्योंकि उस समय जगतगुरु भगवान सरागी ही थे, वीतरागी नहीं थे उन छह कर्मों में तलवार आदि शस्त्र धारण कर सेवा करना असिकर्म कहलाता है, लिखकर आजीविका करना मसिकर्म कहलाता है जमीन को जोतना बोना कृषि कर्म है, शास्त्र पढ़ाकर यह नृत्यगान आदि द्वारा आजीविका करना विद्याकर्म है, व्यापार करना वाणिज्य है और हस्त की कुशलता से चित्र खींचना आदि शिल्पकर्म है। उसी समय आदिब्रह्मा भगवान ऋषभदेव ने तीन वर्णों की स्थापना की थी क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र आगे चलकर इनके बड़े पुत्र भरत चक्रवर्ती ने ब्राह्मण वर्ण की स्थापना की थी। भगवान ऋषभदेव ने अकम्पन आदि चार महापुरुषों को राज्य व्यवस्था बताकर 'महाराज पद' पर उन्हे नियुक्त किया, इसलिये भगवान ऋषभदेव 'आदिब्रह्मा', 'युगादिपुरुष' विधाता आदि कहलाने लगे। अनन्तर मोक्षमार्ग की स्थिति प्रगट करने के लिये वे दिगम्बर मुनि हो गये। उनके साथ चार हजार राजा मुनि हो गये पर वे मुनि लम्बे समय तक कठिन साधना नही कर सके एवं कुछ परिवर्तन करते हुए साधना में सरलता और अन्य विधियां धारण कर मुनियों ने अनेक मतों की स्थापना की। कुछ समय बाद सम्राट भरत चक्रवर्ती ने ब्राह्मण वर्ण नाम से एक और वर्ण स्थापित कर दिया। अयोध्या के ऋषभदेव राजकीय उद्यान में नवनिर्मित मूर्ती के निकट यह सभी शिलापट लगाये गये हैं। जो जैनधर्म और अयोध्या की प्राचीनता का प्रमाण है। (श्रोतः क्षेत्रकार्य अध्ययन आधारित)

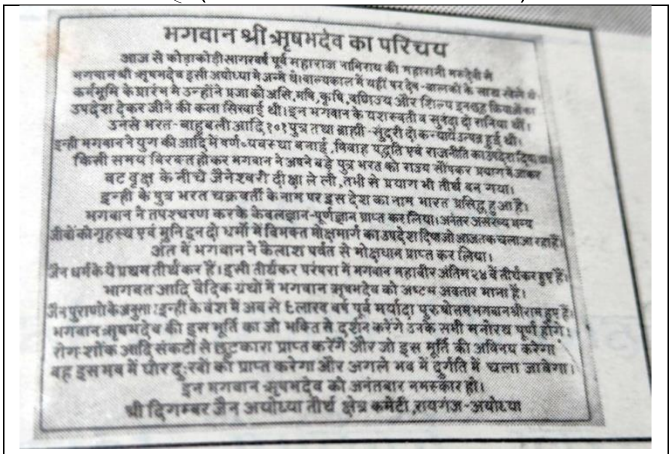

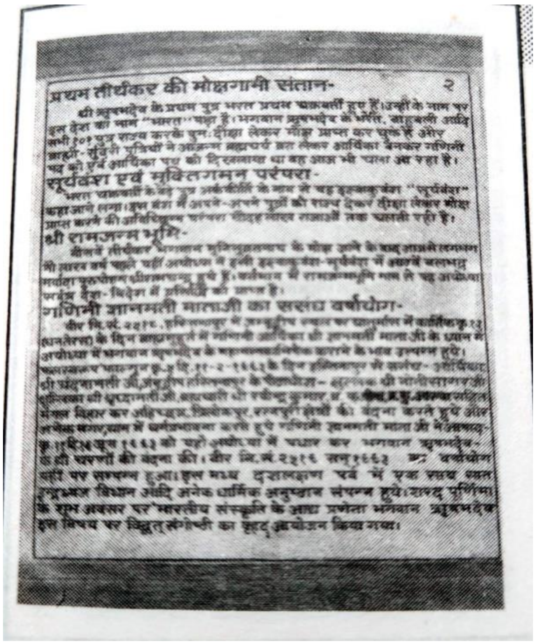

Journal of Research and Development
Peer Reviewed International, Open Access Journal.
ISSN : 2230-9578 | Website: https://jrdrvb.org Volume-17, Issue-7 | July - 2025

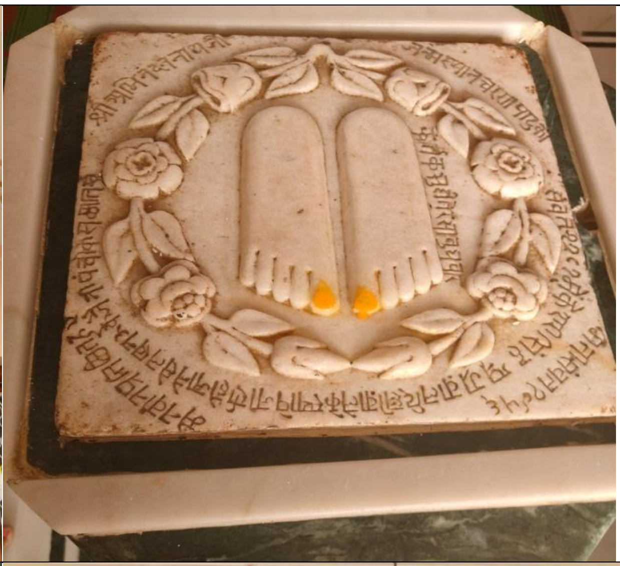

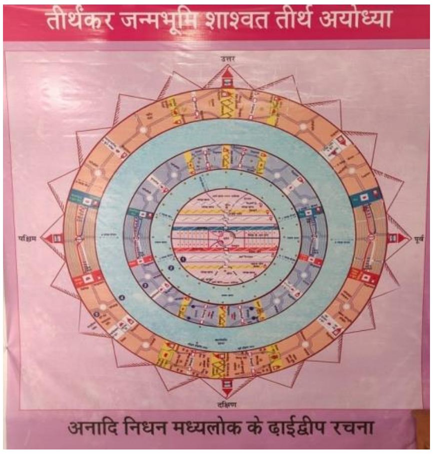
तीर्थंकर जन्मभूमि शाश्वत तीर्थ अयोध्या
अनादि निधन मध्यलोक के ढाईद्वीप रचना

भगवान अनन्तनाथ जन्मभूमि
राजघाट-अयोध्या

पाँचवें तीर्थंकर भगवान
सुमतिनाथ का जीवन दर्शन

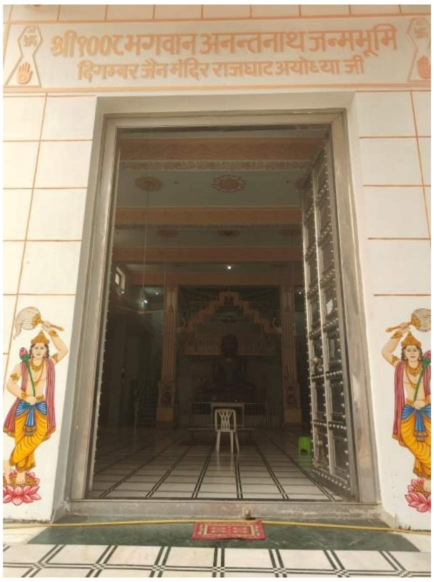
श्री1008 भगवान अनन्तनाथ जन्मभूमि
दिगम्बर जैन मंदिर राजघाट अयोध्या जी

Journal of Research and Development
Peer Reviewed International, Open Access Journal.
ISSN : 2230-9578 | Website: https://jrdrvb.org Volume-17, Issue-7 | July - 2025

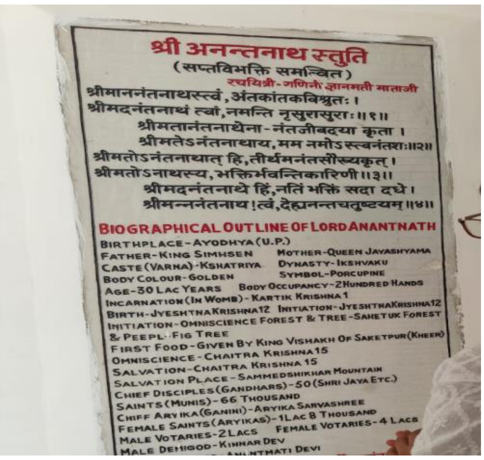


**उपसंहारः-** उपर्युक्त शोध पत्र के माध्यम से जैन धर्म की प्राचीनता और प्रथम तीर्थंकर ऋषभदेव की जन्मभूमि के रूप में 'अयोध्या' का एक वर्णनात्मक अध्ययन प्रस्तुत किया गया है। जिसमें द्वितीयक अध्ययन के श्रोत के रूप में पुराणिक ग्रन्थों की प्रमाणिकता के आधार पर दर्शाने का प्रयास किया गया है। स्रष्टि के प्रारम्भ से ही अयोध्या इन्द्रों द्वारा निर्मित और प्रथम कर्मभूमि के विख्यात 'अनादि', 'महातीर्थ' है एवं युग-युग से संस्कृति का साक्षी रहा है। भगवान श्री ऋषभदेव से, मर्यादापुरुषोत्तम श्री राम की जन्म भूमि के रूप में विश्वविख्यात है।

**संदर्भ ग्रन्थ सूचीः**

1. आचार्य जिनसेन विरचित "हरिवंशपुराण", संपादक डा. पन्ना लाल जैन, प्रकाशक भारतीय ज्ञानपीठ।
2. आचार्य जिनसेन विरचित "आदिपुराण" (प्रथम भाग)
3. श्री ज्ञानमती माता जी द्वारा रचित "जैन भारती" प्रकाशक, दिगम्बर जैन त्रिलोकसंस्थान जम्बूद्वीप, हस्तिनापुर (मेरठ)
4. श्री श्री विष्णुपुराण- प्रकाशक - गीता प्रेस गोरखपुर।
5. महर्षि वाल्मीकिकृत 'रामायण' - प्रकाशक गीता प्रेस गोरखपुर।
6. महर्षि वेदव्यास प्रणीत "श्रीमदभागवत" महापुराण (प्रथम खण्ड) प्रकाशक- गीता प्रेस।
7. अयोध्या विकास स्मारिका प्रकाशक- प्रकाशक, दिगम्बर जैन त्रिलोकसंस्थान जम्बूद्वीप, हस्तिनापुर (मेरठ)
8. मार्कण्डेपुराण
9. महापुराण